ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-12* March-2021
Anthology : The Research

मध्यकालीन व्यवस्थाओं से संघर्षरत एक नारी : मीरा

A Woman Struggling With Medieval Systems: Meera

Paper Submission: 02/03/2021, Date of Acceptance: 20/03/2021, Date of Publication: 24/03/2021

संगीता नागरवाल
सह. आचार्य,
इतिहास विभाग,
राजकीय पी.जी. महाविद्यालय,
बांदीकुई, दौसा, राजस्थान,
भारत

सारांश

नारी व्यक्तित्व की स्वतन्त्र पहचान निर्मित करने वाली तथा युग की विभीषिकाओं के विरूद्ध संघर्षशील विद्रोहिणी, जिसकी गिनती मध्यकालीन भारत के महान संतो में की जाती है वह है मीरा। मीरा जिसका जन्म ऐसे घराने और ऐसे समय में हुआ जहां नारी की स्वतन्त्रता के बारे में सोचा भी नही जा सकता जिन्हें बोलने व सामने आने तक की अनुमति नहीं होती और मीरा तो ऐसे सुप्रसिद्व राजघराने (मेवाड़) की बहु और (मेडता) की कन्या थी जहां विशेष तौर पर महिलाओं की आजादी पर अंकुश था पति के साथ पत्नि के सती होने की प्रथा थी लेकिन क्रांतिकारी विचार की मीरा ने इन सब पारिवारिक व मध्यकालीन सामाजिक बंधनो को तोडते हुये राजमहल व समाज की चार दिवारी से बाहर निकलकर प्रेममय भक्ति में लीन होकर साधु संतो के साथ सत्संग में रहने लगी और विभिन्न समस्याओं और कठिनाईयों को झेलते हुये भी मीरा ने सामाजिक और धार्मिक दोनो परम्परागत बंधनो को तोडते हुये नई राह पर चलने का क्रान्तिकारी/साहासिक कदम उठाकर इतिहास में अपने आप को अमर कर दिया।

Meera, who created the independent identity of the female personality and struggled against the woes of the era, which is counted among the great saints of medieval India is Meera. Meera, who was born in a household and at a time where the freedom of women cannot be thought of, who are not allowed to speak and come to the fore, and Meera was the daughter-in-law of such a well-known royal family (Mewar) and the daughter of (Medata). Where the freedom of women in particular was curbed, there was the practice of wives' sati with their husbands. But Meera of the revolutionary idea broke all these family and medieval social bonds and got out of the palace and four divis of the society and got engaged in loving devotion and started living in satsang with sage saints and despite facing various problems and difficulties, Meera also social And by breaking both the traditional bonds of religion, he immortalized himself in history by taking the revolutionary / political step of walking on a new path.

मुख्य शब्द : नारी, मीरा, स्वतन्त्रता, क्रांतिकारी, राजपूतानी।
Women, Meera, Independence, Revolutionary, Rajputani.

प्रस्तावना

सुमित्रानंदन पंत ने मीरा को राजपूताने के मरूस्थल की मंदाकिनी कहा है मीरा भक्तिकालीन कवियत्री थी। सगुण भक्ति धारा में कृष्ण को आराध्य मानकर इन्होंने कविताएं की। गोपियों के समान मीरा भी कृष्ण को अपना पति मानकर माधुर्य भाव से उनकी उपासना करती रही। मीरा के पदो में तल्लीनता, सहजता और आत्मसमर्पण का भाव सर्वत्र विधमान है। मीरा ने कुछ पदो में रैदास को गुरूरूप में स्मरण किया है तो कही–कही तुलसीदास को अपने पुत्रवत स्नेह पात्र बताया है।

मीरा का प्रारम्भिक जीवन

मीरा ने स्वयं ने अपनी रचनाओं में अपने आप को मीरा कहा है। जैसे कि ''मेड़तिया'' घर जन्म लियों है, मीरा नाम कहायो।

अतः मीरा का जन्म मेड़ता के राठौड़ राव दुदाजी के पुत्र रतनसिंह की इकलौती पुत्री के रूप में राणी टांकणी जी कसबू कंवरजी कलहण हमीरोतरा से 1498 में सवत् 1555 में पाली के कुड़की नामक ग्राम में हुआ था। जब मीरा लगभग 2 साल की थी इनकी माता का देहान्त हो गया, इसके बाद राव दुदाजी ने मीरा का पालन पोषण किया। संवत 1572 में राव दुहादी का स्वर्गवास हो गया और वीरमदेव मेडाता का अधिकारी हुए।

मीरा की भक्ति का स्वरूप

मीरा जिसकी भक्ति माधुर्यभाव की कृष्ण भक्ति है। मध्य कालीन भक्ति आंदोलन के संतो में मीरा स्वयं में अपना प्रमुख स्थान रखती है कृष्ण भक्तों में मीरा का प्रमुख नाम है। मीरा की भक्तिमय जीवन की धारा किन–किन मोड़ों से निकलकर अपने आराध्य में विलीन हो गई उसका एक सम्पूर्ण चित्र इस लेख में प्रस्तुत करने का प्रयास करेगें।

पग घुघरू बांध मीरा नाची रे !

बाल्यकाल और मीरा की कृष्ण भक्ति

मीरा में कृष्ण के प्रति भक्ति का बिजारोपण बाल्यावस्था से ही हो गया था। उनक पिता रतन सिंह, पितामह, दूदाजी, ताऊजी वीरमदेव, भाई जयमल और उनकी दादी सभी वैष्णव धर्म के अनुयायी थे और चार भुजा स्वरूप के उपासक थे। परिवार के सदस्यों की भक्ति भावना व मेड़ता के धार्मिक वातावरण का प्रभाव मीरा पर पड़ा। कहा जाता है कि जब मीरा केवल दस वर्ष की थी उनके घर अभ्यागत बन कर आये संत के पास श्रीकृष्ण की एक मूर्ति थी जब वे उसकी पूजा करने लगे उस समय मीरा भी वही बैठी थी। बाल सुलभ मीरा का मन मूर्ति के सौन्दर्य पर आकृष्ट हो गया। उन्होंने साधु से पूछा महाराज, आप जिनकी पूजा कर रहे है, इनका नाम क्या है ? साधु ने उत्तर दिया कि यह गिरधर लाल जी है। मीरा ने कहा आप इन्हें मुझे दे दीजिए। इससे वह साधु रूष्ट होकर वहां से चला गया। मीरा ने मूर्ति प्राप्त करने के लिए हठ करते हुय अन्न जल सब छोड सात दिन तक कुछ नही खाया। घर के लोग परेशान हो गये। तब उस साधु को भगवान ने स्वप्न में मूर्ति मीरा को देने का आदेश दिया। साधु ने वैसा ही किया। गिरधर लाल जी की मूर्ति पाकर मीरा अत्यंत प्रसन्न हुई और नितनेम के साथ आठों याम उसकी पूजा अर्चना करने लगी। यह भी कहा जाता है कि एक दिन मीरा ने एक भव्य बारात देखी जिसमें अनेक प्रकार के बाजे बज रहे थे दुल्हा पालकी में बैठा थां मीरा ने दादी से उत्सुकतावश पूछो कि मेरा दुल्हा कौन है ? दादी ने उत्तर में कहा गिरधर लाल जी ही तुम्हारा पति है। उसी दिन से मीरा ने भगवान कृष्ण को ही अपना पति मान लिया। वह उसी दिन से मग्न होकर गाने लगी।

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई।
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई।।

इस प्रकार बाल्यकाल से ही मीरा में भगवत भक्ति के संस्कार जागृत हुये। वे अपनी सहेलियों के साथ खेल खिलवाड में भी ठाकुर जी की पूजा, ब्याह, बारात और नित्य नवीन उत्सव का खेल खेलती थी । उनके हृदय मंदिर में बचपन से ही ऐसे आलौकिक प्रेमानुराग की छटा छिटकने लगी थी जिसे देखकर लोगों को आश्चर्य होता था। विवाह के बाद मीरा इस मूर्ति को भी अपने साथ चित्तौड ले गई जयमलवंश प्रकाश के अनुसार मीरा अपने शिक्षक पंडित गजाधर को भी अपने साथ चित्तौड ले गई थी और दुर्ग में मुरलीधर का मंदिर बनवाकर सेवा पूजा आदि का समस्त कार्य गजधर को सौप दिया इस प्रकार विवाह के बाद भी मीरा कृष्ण की पूजा तथा अर्चना करती रही।

विवाह ओर मीरा की कृष्ण भक्ति

संवत 1572 में राव दूदाजी की मृत्यु के बाद मीरा के ताऊ वीरमदेव मेडता के अधिकारी बने। गद्दी पर बैठने के दूसरे वर्ष उन्होंने अपने पिता की लाडली पोती व कनिष्ठ भ्राता की पुत्री मीरा का विवाह मेवाड के महाराणा सांगा के पुत्र भोजराज के साथ मेवाड में संवत 1573 (1516) ई. में कर दिया। कहा जाता है कि विवाह के अनन्तर ससुराल आते समय मीरा अपने साथ गिरिधर लाल की मूर्ति भी लेती आई और वहां भी उसका पूजा एवं अर्चना करती रही। लेकिन 1518 में मीरा के पति भोजराज एक संघर्ष में जख्मी हो गए और सन् 1521/1523 ई. में भोजराज की मृत्यु हो गई। कहां जाता है कि पति की मृत्यु के बाद जब उन्हें पति के साथ सती होने को कहा गया तो मीरा ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया और मीरा ने वैधव्य का जीवन स्वीकार किया लेकिन यह वैधव्य का जीवन तो समाज के लिये था मीरा तो कृष्ण को अपना पति मानती थी और वह भोजराज की मृत्यु के बाद भी पूर्ण श्रृंगार के साथ रहती थी क्योंकि उसने अलौंकिक सुहाग पा लिया था और अब वह पंग घुघरू बांध मीरा नाची रे की अवस्था में आ गई थी।

मीरा बाई अपने पति सुख से अल्पकाल में ही वंचित हो गई जिससे उनका मन संसार से उचट गया और वह अपना अधिकांश समय सत्संग तथा भजन कीर्तन में व्यतीत करने लगी। कुछ समय पश्चात दुर्भाग्य का चक्र फिर से घूमा और संवत 1584 (1527) में खानवा के युद्व में बाबर के विरूद्ध लड़ते हुये मीरा के पिता की मृत्यु हो गई। पिता के मारे जाने के एक वर्ष पश्चात मीरा के ससुर राणा सांगा की मृत्यु हो गई। इन हृदय विदारक घटनाओं ने मीरा को वैराग्य भावना से भर दिया। अब मीरा का अधिकांश समय साधु संतो के साथ उठने बैठने व उनके साथ भजन कीर्तन करने में व्यतित होन लगा जो तत्कालीन मेवाड के राणा (मीरा के देवर) विक्रमदिव्य (1531–36) को पसन्द नही था। क्योंकि साधु संतो के साथ राजघराने की बहु का सानिध्य वंश परम्परा कुल की मर्यादा के विरूद्ध था और चित्तौड के उज्ज्वल इतिहास पर एक कलंक था मीरा को समझाने की कोशिश की गई लेकिन मीरा के नही मानने पर मीरा को अनेक प्रकार के कष्ट भी दिये गये जैसे की मीरा को जहर दिया गया, सॉप से कटवाने का प्रयत्न किया, चरित्र पर सन्देह किया, दण्ड देने का प्रयत्न आदि यातनाओं का उल्लेख मिलता है – मीरा ने स्वयं इन अत्याचारों का उल्लेख अपने गीतो में किया है। जैसे

मीरा मगन भई हरि के गुण गाय।
सांप पिटारा राणा भेज्यो, मीरा हाथ दिये जाय।।
न्हाय धोय जब देखण लगी सालिगराम गई पाय।
जहर का प्याला राणा भेज्या अमृत दीन्ह बनाय।।
न्हाय धोय जब पीवण लागी हो इमर अंचाय
हेरी मै तो प्रेम दीवाणी मेरो दर्द न जाने कोय।।

वैराग्य जीवन ओर मीरा की भक्ति

इस प्रकार के अत्याचारो से मीरा तंग आ चुकी थी। इसीलिए सन 1533 में मीरा को राव वीरमदेव ने मेडता बुला लिया। मीरा के चित्तौड त्याग के अगले साल 1534 में गुजराज के बहादुरशाह ने चित्तौड पर कब्जा कर लिया। मीरा मेवाड छोडकर वीरमदेव के पास मेडता आ गई थी वीरमदेव इस समय मेडता के सरदार थे मेडता में भी मीरा का अधिकांश समय तपस्या कीर्तन और नृत्य में व्यतीत होने लगा। लेकिन जब जोधपुर के शासक राव मालदेव ने मेड़ता पर आक्रमण कर उसे जीत लिया तो मीरा बेघर हो गई वह वैराग्य भावना से और अधिक भर गई। मीरा मेडता से मथुरा और मथुरा से अंत में द्वारका चली गई मीरा ने अपना शेष जीवन द्वारका में ही कृष्ण की भक्ति में व्यतीत किया तथा वही 1547 में उसकी मृत्यु हो गई। कहा जाता है कि वो कान्हा की मूर्ति में एकाकार हो गई । कृष्ण भक्ति की अनन्य प्रेम भावनाओं में अपने गिरधर के प्रेम में रंग राती मीरा का दर्द भरा स्वर अपनी अलग पहचान रखता है। समस्त भारत उस दर्द दीवानी की माधुर्य भक्ति से ओतप्रोत रससिक्त वाणी से आप्लावित है मीरा के पदो का वेशिष्टय उसकी तीव्र आत्मानुभूति में निहित है। मीरा का विषय है– श्रीकृष्ण के प्रति उनका अनन्य प्रेम और भक्ति। मीरा ने प्रेम के मिलन (संयोग) तथा विरह (वियोग) दोनो पक्षों की सुन्दर अभिव्यक्ति की है। श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम में मीरा किसी भी बाधा या यातना से विकल नही होती। लोक का भय अथवा परिवार की प्रताडना दोनो का ही वे दृढ़ता के साथ सामना करती है।

ज्यों–ज्यों मीरा को कष्ट दिये गये मीरा का लोकिक जीवन से मोह समाप्त होता गया और कृष्ण भक्ति में उसकी निष्ठा बढ़ती गई। वह कृष्ण को अपने पति के रूप में स्वीकार कर अमर सुहागिन बन गई। मीरा की आध्यात्मिक यात्रा तीन सोपानों से होकर गुजरती है।

प्रथम सोपान

प्रारम्भ में मीरा का कृष्ण के लिए लालायित रहने का है इस भूमि पर मीरा में अपने गिरिधर गोपाल से मिलने की तीव्र लगन है जो इनके प्राणेश है, जो जीवनाधार है उनकी प्रतिक्षा में रात्रि की नीरव घड़ियो को वे आंखो में व्यतीत करती है। इस अवस्था में वह व्यग्रता से गाती है–

मे विरहणि बैठी जांगू जग सोवेरी आलि।
एक विरहिन हम ऐसी देखी असुवन की माला पोवे।
तारा गिण गिण रैण बिहाणी सुख की घडी कब आवे।
नींद नही आवे जी सारी रात ।
करवट लेकर सेज टटोलू पिया नही मेरे साथ
सगरी रैन मोहे तरफत बीती सोच सोच जिय जगत
मीरा की यह कामना है कि बसो मेरे मनन में नंदलाल
मोहनि मूरति सांवरि सूरति नैना बने बिसाल
अधर सुधारस मुरली राजति उर बैजति माल।

कृष्ण के प्रति मीरा की विरह वेदना सूरदास की गोपियो से कम नही है तभी तो सुमित्रा नंदन पंत उसे राजपूताने के मरूस्थल की मन्दाकिनी कहते है हेरी में तो प्रेम दिवानी मेरा दर्द न जाने कोई।

सखी मेरी नींद नसानी हो
प्रिय को पंथ निहारत, सब रेन बिठानी हो

कृष्ण मिलन की तडप में मीरा बोल उठती है–

दरस बिन दुखण लागे नैन।
जब के तुम बिछुरे प्रभु मेरे कबहुं ने पायो चैन।
राम मिलन के काज सखी मेरे आरति उर में जागीरे।
तलफत तलफत कल न परत है, बिरह बाण उर लागी रे।
निस दिन पंथ निहारू पीव को, पलक न पल भरि लागी रे।
विरह विथा लागी उर अन्तर, सो तुम आन बुझावों हो
अब छोडत नही बने प्रभु जी, हंसि कर तुरन्त बुलावो हो।

मीरा के लिए राम ओर कृष्ण के नाम में कोई अन्तर नही है।

मीरा के पदो की कडियां अश्रुकणों से गीली है सर्वत्र उनकी विरहाकुलता तीव्र भावभिव्यंजना के साथ प्रकट हुई है उनकी कसक प्रेमोन्माद के रूप में प्रकट हुई है। उनका उन्माद तत्लीनता ओर आत्मसमर्पण की स्थिति तक पहुंच गया है प्रकृति की पुकार में उनका दर्द ओर बढ़ जाता है मतवारो बादर आये। हरि को सनेखा कबहु न लाये।

इसलिये वे कहती है कि मेरो मन राम हि राम रटै।
राम नाम रस पिजै, मनवा राम नाम रस पीजे।।

द्वितीय सोपान

इसके बाद मीरा की कृष्ण भक्ति का दूसरा सोपान आरम्भ होता है। जबकि वे अपने गिरिधर गोपाल को अपने ही मन मन्दिर में प्रतिष्ठित अनुभव करती हे। यह उपलब्धि चिर वांछित थी अनमोल थी ईश्वर प्राप्ति की खुशी उनके दोहो में स्पष्ट झलकती है।

पायोजी मैने रामरतन धन पायो,
वस्तु अमोलक दी म्हारे सदगुरू, किरपा करि अपनायो।
साजण म्हारे धरि आया हो।
जुगां जुगां री जावतां विरहणि पिव पाया हो।
थारी छवि प्यारी महाराज
रतन जडित सिर पेच कलंगी केसरिया सब साज ।
मोर मुकुट मकराकृत कुण्डल रसिकार सिरताज।
माई गई ! मै तो लिया गोविंदा मोल।
कोई कहैं छाने कोई कहै छुपके लियो री बजता ढोल।

मीरा के ये उदगार उसकी प्रसन्नता के सूचक है।

तीसरा सोपान

गुरू कृपा तथा अपनी अनन्य साधना के फल स्वरूप प्राप्त उपलब्धि के बाद मीरा की साधना का तीसरा मोड शुरू होता है। जब मीरा को आत्म बोध हो जाता है जो सायुज्य शक्ति की चरम सीढ़ी है। अब वो भागवत के कृष्ण गोपियो के संख्य भाव से ओतप्रोत हो जाती है और मीरा सहसा कह उठती है

मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरा न कोई।
जाके सिर मोर मुकुट, मेरा पति सोई
छाडि दयी कुल की कानि, कहा करिहै कोई
संतन ढिग बैठि बैठि, लोक लाज खोयी
असुवन जल सीचि सीचि, प्रेम बेलि बोयी
अब त बेलि फैलि गई, आणंद फल होयी
दूध की मथनियाँ बडे प्रेम से विलोयी
दधि मथि मृत काठि लियो, झारि दयी छोयी
मगल देखि राजी हुयी, जगत देखि रोयी

दासि मीरा लाल गिरधर, तारो अब मोही

आगे वे कहती है– भज मन चरण कंवल अविनासी

कहा भयो तीरथ वृत कीन्हे कहा लिए करवत कासी

मीरा अब अपने सांवरे के रंग में सराबोर हो गई है, वे कहती है

मै तो सांवरे के रंग राची

साजि सिंगार बांधि पग घुघरूं लोक लाज ताजि नाची।

मीरा प्रसन्नता में कहती है कि मै तो गिरधर के घर जाऊ

रैण दिना बाके संग खेलू, ज्यू ज्यू बाहि रिझाऊ

जो पहिरावे सोई पहिरू, जो दे सोई खाऊ

जहां बैठाये तिताही बैठू, बेचे तो बिक जाऊ

आज अनारी ले गयी सारी, बैठी कदम की डारी है माय।

म्हारे गेल पड्यो गिरधारी हो माय।

मै जल जमुना भरन गई आ गये कृश्न मुरारी हे मय

ले गये सारी अनारी म्हारी जल में अभी उधारी हो माय।

यह मीरा की कृष्ण के साथ एकाकार की चरम सीमा है।

मीरा के काव्य से सांसारिक बन्धनो का त्याग तथा ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण का भाव मिलता है। मीरा की दृष्टि में माता–पिता, भाई बन्धु, समस्त सांसारिक वैभव, राजपाट, उच्च पद, सम्मान, समस्त सांसारिक सुख आदि मिथ्या है यदि कोई सत्य है तो केवल गिरधर गोपाल जो इनके एकमात्र सहायक है और भव सागर के पार उतारने वाले खेवनहार है।

यो संसार सकल जग झूठो, झूठा कुल का नाती।

राजपाट झूठी सब माया, वो झूठी जग दिखलायो।

तुल बिना कोउ नाही मेरी, मेरी पुकार कहु टेरी

अटकी नाव समद बीच, बेड प्रभुजी पार लगासी।

मीरा की मान्यता थी कि संसार छोड देने से व ईश्वर के प्रति पूर्ण आत्म सर्म्पण कर देने से ईश्वर की प्राप्ति संभव है।

तेरेहि कारण जोग लियो है घर–घर अलख जगाई।

मीरा की भक्ति में किसी प्रकार के आडम्बरपूर्ण पूजा पाठ, रूढियों ओर ब्राह्य उपकरणों के लिये कोई स्थान नही है वह दिखावों, ढोंग और परम्परागत मिथ्या मान्यताओं से परे थी भक्ति का सरल व सरस मार्ग अपनाते हुये अपने प्रिय का स्मरण करती हुई अपनी पद रचना, गायन और नृत्य से अपने गिरधर गोपाल को ऐसा रिझा गई कि कृष्ण स्वयं मीरा मय और मीरा कृष्ण मय हो गये। मीरा साधना के लिये काम, क्रोध, लोभ, मोह, माया, अहंकार का अन्त जरूरी समझती है साथ ही साधु संगति शील संतोष को धारण करना आवश्यक मानती है मीरा की समस्त चेतना केवल एक ही बिन्दु पर केन्द्रित है जो भक्ति भाव से ओत प्रोत थी गिरिधर के अतिरिक्त मीरा के लिये इस लौकिक व पारलौकिक संसार में कुछ भी नही था यानी कि वो भक्ति से परिपूर्ण थी भक्ति से सरोवार थी उसका बल भावना ओर श्रृद्वा पर था।

संक्षेप में मीरा की भक्ति के सरस सागर की कोई थाह नही है जहां जब तक चाहे गोते लगाओं। प्रेमोमाद प्रमोन्माद तीव्रता, ओर तन्मयता की त्रिवेणी का पूरा वेग उनकी रचनाओं में परिलक्षित होता है मीरा की रचनाएं है–

1. गीत गोविन्द टीका
2. सोरठा के पद
3. राग गोविन्द
4. नरसी जी रो मायरो – ये सभी रचनाये मीरा की पदावली के नाम से विख्यात है।

निष्कर्ष

इस प्रकार मीरा की काव्या भाषा में विविधता दिखलाई देती है वे कही शुद्ध बृजभाषा का प्रयोग करती है तो कही राजस्थानी बोलियों का सम्मिश्रण कर देती है। (2) इनकी काव्य की भाषा में गुजराती, पूर्वी, हिन्दी तथा पंजाबी के शब्दो की बहुतायत है पर इनके पदो का प्रभाव पूरे भारतीय साहित्य में दिखलाई देता है। (3) इनके पदो में अलंकारो की सहजता और गैयता अदभुत है जो सर्वत्र माधुर्य गुण से ओतप्रोत है। (4) मीरा ने बडे सहज और सरल शब्दों में अपनी प्रेम पीडा को कविता में व्यक्त किया है।

मीरा के विचार अतीत और वर्तमान से सबंद्व होकर भी मौलिक थे परम्परा समर्पित होकर भी पूर्णतः स्वतंत्र थे व्यापक होकर भी सर्वथा व्यक्तिनिष्ठ थे।

इस प्रकार 16वीं सदी में भक्ति की जिस धारा का उदगम मीरा ने किया था आज भी वही भक्ति धारा उसी प्रथा से प्रवाहित हो रही है वास्तव में मीरा ईश्वर भक्ति की लगन वाली साधिकाओं में प्रमुख है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *राजस्थानी साहित्य, उदयपुर वर्ष, 1 अंक 2*
2. *गहलोत महावीर सिंह– मीरां जीवनी और काव्य*
3- *Sharma, Dr. G.N. - Social life in medieval Raj.*
4. *परशुराम चतुर्वेदी– मीरां बाई की पदावली*
5. *मीरा स्मृति ग्रन्थ*
6. *मुंशी देवी प्रसाद – मीरा बाई का जीवन चरित्र*
7. *स्वामी आनन्द स्वरूप– मीरा सुधा सिन्धु*
8. *शर्मा डॉ. गोपीनाथ– राजस्थान का इतिहास प्रथम खण्ड*
9. *ओझा– जोधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खण्ड*
10. *मीराबाई की शब्दावली*
11. *Tod: Annals and Antiquities of Rajasthan val. I*
12. *खत्री कार्तिक प्रसाद– मीरा बाई का जीवन चरित्र*
13. *सेंगर शिवसिंह व सरोज शिव सिंह– मीरा बाई*
14. *पदमावती शबनम– मीरा बाई का अध्ययन*
15. *ओझा– उदयपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खण्ड*
16. *कुल गुरूओं की बही ''राठौडो की वंशावली''*
17. *मीराबाई की परची*
18. *कुडकी री ख्यात बस्ता नं. 80 ग्रन्थांक 10*
19- *Sharma Dr. G.N.- Mewar and the Mughal Emperars*
20. *नैणसी री ख्यात, भाग–2*
21. *संरस्वती (प्रयाग) भाग 40, अंक 3*
22. *सन्तवाणी पत्रिका, वर्ष 1, अंक 11*
23. *ब्रजरत्नदास – मीरा– माधुरी*